॥ॐ॥

॥श्री परमात्मने नम: ॥

॥श्री गणेशाय नमः॥

सीता उपनिषद

विषय सूची

॥अथ सीतोपनिषत् ॥ 3

सीता उपनिषद 5

शान्तिपाठ 17

॥ श्री हरि ॥

॥अथ सीतोपनिषत् ॥

॥ हरिः ॐ ॥

इच्छाज्ञानक्रियाशक्तित्रयं यद्भावसाधनम् ।
तद्ब्रह्मसत्तासामान्यं सीतातत्त्वमुपास्महे ॥

ॐ भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः ।
स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवाꣳसस्तनूभिर्व्यशेम देवहितं यदायुः ॥

गुरुके यहाँ अध्ययन करने वाले शिष्य अपने गुरु, सहपाठी तथा मानवमात्र का कल्याण-चिन्तन करते हुए देवताओं से प्रार्थना करते है कि:

हे देवगण ! हम भगवान का आराधन करते हुए कानों से कल्याणमय वचन सुनें। नेत्रों से कल्याण ही देखें। सुदृढः अंगों एवं शरीर से भगवान की स्तुति करते हुए हमलोग; जो आयु आराध्य देव परमात्मा के काम आ सके, उसका उपभोग करें।

स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः ।
स्वस्ति नस्ताक्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु ॥

जिनका सुयश सभी ओर फैला हुआ है, वह इन्द्रदेव हमारे लिए कल्याण की पुष्टि करें, सम्पूर्ण विश्व का ज्ञान रखने वाले पूषा हमारे लिए कल्याण की पुष्टि करें, हमारे जीवन से अरिष्टों को मिटाने के लिए चक्र सदृश्य, शक्तिशाली गरुड़देव हमारे लिए कल्याण की पुष्टि करें तथा बुद्धि के स्वामी बृहस्पति भी हमारे लिए कल्याण की पुष्टि करें।

॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः॥

भगवान् शांति स्वरुप हैं अत: वह मेरे अधिभौतिक, अधिदैविक और अध्यात्मिक तीनो प्रकार के विघ्नों को सर्वथा शान्त करें ।

॥ हरिः ॐ ॥

॥ श्री हरि ॥

॥ सीतोपनिषत् ॥

सीता उपनिषद

देवा ह वै प्रजापतिमब्रुवन्का सीता किं रूपमिति ।
स होवाच प्रजापतिः सा सीतेति । मूलप्रकृतिरूपत्वात्सा
सीता प्रकृतिः स्मृता । प्रणवप्रकृतिरूपत्वात्सा सीता
प्रकृतिरुच्यते । सीता इति त्रिवर्णात्मा साक्षान्मायामयी
भवेत् । विष्णुः प्रपञ्चबीजं च माया ईकार उच्यते ।
सकारः सत्यममृतं प्राप्तिः सोमश्च कीर्त्यते ।
तकारस्तारलक्ष्म्या च वैराजः प्रस्तरः स्मृतः ।
ईकाररूपिणी सोमामृतावयवदिव्यालङ्कारस्रङ्मौक्तिका-
द्याभरणलङ्कृता महामायाऽव्यक्तरूपिणी व्यक्ता भवति ।
प्रथमा शब्दब्रह्ममयी स्वाध्यायकाले प्रसन्ना उद्भावनकरी
सात्मिका द्वितीया भूतले हलाग्रे समुत्पन्ना तृतीया
ईकाररूपिणी अव्यक्तस्वरूपा भवतीति सीता इत्युदाहरन्ति ।
शौनकीये । ॥ १-६॥

देवताओं ने एक बार प्रजापति से प्रश्न किया कि हे देव! श्री सीताजी का क्या स्वरूप है? सीताजी कौन हैं? यह हम सबकी जानने की इच्छा है। प्रश्न सुनकर उन प्रजापति ब्रह्माजी ने कहा-वे सीता जी साक्षात् शक्तिस्वरूपिणी हैं। प्रकृति का मूल कारण होने से सीता जी

मूलप्रकृति कही जाती हैं। प्रणव, प्रकृतिरूपिणी होने के कारण भी सीता जी को प्रकृति कहते हैं। सीताजी साक्षात् मायामयी (योगमाया) हैं। त्रयवर्णात्मक यह 'सीता' नाम साक्षात् योगमायास्वरूप है। भगवान् विष्णु सम्पूर्ण जगत् प्रपञ्च के बीज हैं। भगवान् विष्णु की योगमाया ईकार स्वरूपा है। सत्य, अमृत, प्राप्ति तथा चन्द्र का वाचक 'स' कार है। दीर्घ आकार मात्रायुक्त'त' कार होने के कारण प्रकाशमय विस्तार करने वाला महालक्ष्मी रूप कहा गया है। 'ई' कार रूपिणी वे सीताजी अव्यक्त महामाया होते हुए भी अपने अमृततुल्य अवयवों तथा दिव्यालंकारों आदि से अलंकृत हुई व्यक्त होती हैं। महामाया भगवती सीता के तीनरूप हैं। अपने प्रथम' शब्द ब्रह्म' रूप में प्रकट होकर बुद्धिरूपा स्वाध्याय के समय प्रसन्न होने वाली हैं। इस पृथ्वी पर महाराजा जनक जी के यहाँ हल के अग्रभाग से द्वितीय रूप में प्रकट हुईं। तीसरे 'ई' कार रूप में वे अव्यक्त रहती हैं। यही तीन रूप शौनकीय तंत्र में सीता के कहे गये हैं ॥ १-६॥

श्रीरामसान्निध्यवशाज्जगदानन्दकारिणी ।
उत्पत्तिस्थितिसंहारकारिणी सर्वदेहिनाम् ।
सीता भगवती ज्ञेया मूलप्रकृतिसंज्ञिता । प्रणवत्वात्प्रकृरिति वदन्ति
ब्रह्मवादिन इति । अथातो ब्रह्मजिज्ञासेति च । ॥ ७-९ ॥

सीता जी को भगवान् श्रीराम का नित्य सान्निध्य प्राप्त है, जिसके कारण वे विश्व कल्याणकारी हैं। वे सब जीवधारियों की उत्पत्ति, स्थिति एवं संहारस्वरूपा हैं। मूल प्रकृतिरूपिणी षडैश्वर्य सम्पन्ना भगवती सीता को जानना चाहिए। उनकेप्रणव स्वरूप होने के कारण

ब्रह्मवादी उन्हें प्रकृति कहते हैं।' अथातो ब्रह्मजिज्ञासा' के इस ब्रह्मसूत्र में उन्हीं के व्यक्ताव्यक्त स्वरूप का प्रतिपादन है ॥ ७-९ ॥

सा सर्ववेदमयी सर्वदेवमयी सर्वलोकमयी सर्वकीर्तिमयी
सर्वधर्ममयी सर्वाधारकार्यकारणमयी महालक्ष्मी र्देवेशस्य
भिन्नाभिन्नरूपा चेतनाचेतनात्मिका
ब्रह्मस्थावरात्मा तद्गुणकर्मविभागभेदाच्छरीरूपा
देवर्षिमनुष्यगन्धर्वरूपा असुरराक्षसभूतप्रेत-
पिशाचभूतादिभूतशरीरूपा भूतेन्द्रियमनःप्राणरूपेति च विज्ञायते ।
॥ १० ॥

वे भगवती सीताजी सर्व वेदस्वरूपिणी, सर्वदेवरूपा, सभी लोकों में समान रूप से संव्याप्त,यशस्विनी, समस्त धर्मस्वरूपा, समस्त जीवधारियों एवं समस्त पदार्थों की आत्मा हैं। सभी भूतप्राणियों के कर्म एवं गुण के भेद से सर्वशरीरस्वरूपिणी, मानव, देव-ऋषि, गन्धर्वो की स्वरूपभूता, समस्त विश्वरूपा महालक्ष्मी महानारायण भगवान् से भिन्न होते हुए भी अभिन्न हैं ॥ १० ॥

सा देवी त्रिविधा भवति शक्त्यासना इच्छाशक्तिः
क्रियाशक्तिः साक्षाच्छक्तिरिति । इच्छाशक्तिस्त्रिविधा
भवति । श्रीभूमिनीलात्मिका भद्ररूपिणी प्रभावरूपिणी
सोमसूर्याग्निरूपा भवति । सोमात्मिका ओषधीनां
प्रभवति कल्पवृक्षपुष्पफललतागुल्मात्मिका
औषधभेषजात्मिका अमृतरूपा देवानां महस्तोम-
फलप्रदा अमृतेन तृप्तिं जनयन्ती देवानामन्नेन

पशूनां तृणेन तत्तज्जीवानां ॥ ११-१३ ॥

शक्तिस्वरूपिणी वे सीताजी त्रिविध स्वरूप वाली, साक्षात् शक्तिस्वरूपा हैं। क्रियाशक्ति, इच्छाशक्ति और ज्ञानशक्ति, तीनों रूपों में प्रकट होती हैं। उनका स्वरूप इच्छाशक्तिमय तीन प्रकार का होता है। श्रीदेवी, भूदेवी, नीलादेवी का रूप धारण किये हुए, अपने प्रभाव से सबका कल्याण करने वाली, चन्द्र, सूर्य एवं अग्नि के रूप में दीप्तिमती रहती हैं। ओषधियों का पोषण करने के लिए वे ही चन्द्रस्वरूपा हैं। कल्पवृक्ष, फल, फूल, लता पौधरूपी ओषधियों एवं दिव्य ओषधियों के रूप में वे ही स्वयं प्रकट हुई हैं। देवताओं को उसी चन्द्र के रूप | में 'महास्तोम' यज्ञ का फल प्रदान करने वाली हैं। अमृत, अन्न एवं तृण के द्वारा देवता, मानव एवं समस्त प्राणियों को वे तृप्त करती हैं ॥ ११-१३ ॥

सूर्यादिसकलभुवनप्रकाशिनी दिवा च रात्रिः कालकलानिमेषमारभ्य
घटिकाष्टयामदिवस(वार)रात्रिभेदेन पक्षमासर्त्वयनसंवत्सरभेदेन
मनुष्याणां शतायुःकल्पनया प्रकाशमाना चिरक्षिप्रव्यपदेशेन
निमेषमारभ्य परार्धपर्यन्तं कालचक्रं जगच्चक्रमित्यादिप्रकारेण
चक्रवत्परिवर्तमानाः सर्वस्यैतस्यैव कालस्य विभागविशेषाः
प्रकाशरूपाः कालरूपा भवन्ति । ॥ १४॥

वे सीताजी ही सूर्यादि समस्त भुवनों को प्रकाशित करती हैं। काल की कलाएँ यथा-निमेष, घड़ी,आठ प्रहर वाले दिन, रात्रि, मास, पक्ष, ऋतु, अयन एवं संवत्सर आदि के भेद से मनुष्यों की शतायु की

कल्पना को पूर्ण करती हुई प्रकाशित होती हैं। शीघ्र एवं विलम्ब के भेद से निमिष से लेकर परार्ध तक काल चक्र ही संसार चक्र है, जिसके सभी अंग-प्रत्यंग सीताजी के ही रूप होने के कारण उन्हें विशेष रूप से प्रकाशरूप एवं कालरूप कहा गया है॥ १४॥

अग्निरूपा अन्नपानादिप्राणिनां क्षुत्तृष्णात्मिका देवानां मुखरूपा वनौषधीनां शीतोष्णरूपा काष्ठेष्वन्तर्बहिश्च नित्यानित्यरूपा भवति । ॥ १५॥

प्राणियों के भीतर वे अग्निरूप में अवस्थित होकर जल एवं अन्न का पान और सेवन करने के लिए प्यास व भूख के रूप में, देवों के लिए मुखस्वरूप, वनौषधियों के लिए शीतोष्णरूपा और काष्ठों में नित्यानित्य रूप । से बाहर तथा भीतर विद्यमान हैं ॥ १५॥

श्रीदेवी त्रिविधं रूपं कृत्वा भगवत्सङ्कल्पानुगुण्येन लोकरक्षणार्थं रूपं धारयति । श्रीरिति लक्ष्मीरिति लक्ष्यमाणा भवतीति विज्ञायते । ॥१६॥

सीताजी ' श्री देवी के त्रिविध रूप में भगवत् संकल्प के अनुसार सर्वलोकरक्षा हेतु महालक्ष्मी के रूप में प्रकट होती हैं और श्री, लक्ष्मी तथा लक्ष्यमाण रूप में प्रतीत होती हैं ॥ १६ ॥

भूदेवी ससागरांभः-
सप्तद्वीपा वसुन्धरा भूरादिचतुर्दशभुवनाना-
माधाराधेया प्रणवात्मिका भवति । ॥ १७ ॥

सप्तद्वीपा, जल सहित समस्त समुद्रों से युक्त पृथ्वी भूः आदि चौदह भुवनों को आश्रय देने वाली जो देवी प्रणव के रूप में प्रकट होती है, माता सीता के उस रूप को भूदेवी कहा गया है ॥ १७ ॥

नीला च मुखविद्युन्मालिनी सर्वौषधीनां सर्वप्राणिनां पोषणार्थं
सर्वरूपा भवति । ॥ १८ ॥

नीलादेवी के रूप में विद्युन्माया के समान मुख वाली भगवती सीता जी सब ओषधियों एवं प्राणियों के पोषण के लिए समस्त रूपों में व्यक्त होती हैं ॥ १८ ॥

समस्तभुवनस्याधोभागे जलाकारात्मिका
मण्डूकमयेति भुवनाधारेति विज्ञायते ॥ ॥ १९ ॥

जो देवी समस्त भुवनों के अधोभाग अर्थात् नीचे होकर जलरूप,मण्डूकमयी तथा सब भुवनों को आश्रय देने वाली हैं, उन सीताजी को आद्याशक्ति कहा गया है ॥ १९ ॥

क्रियाशक्तिस्वरूपं हरेर्मुखान्नादः । तन्नादाद्बिन्दुः ।
बिन्दोरोङ्कारः । ओङ्कारात्परतो राम वैखानसपर्वतः ।
तत्पर्वते कर्मज्ञानमयीभिर्बहुशाखा भवन्ति । ॥ २० ॥

परमात्मा की क्रियाशक्तिरूपा श्रीसीताजी का रूप भगवान् श्रीहरि के मुख से नाद के रूप में प्रकट हुआ। उस नाद से बिन्दु और

बिन्दु से ओंकार प्रकट हुआ। ॐ कार से परे रामरूपी वैखानस पर्वत है। उस पर्वत की ज्ञान और कर्मरूपी अनेक शाखाएँ कही गई हैं॥ २० ॥

तत्र त्रयीमयं शास्त्रमाद्यं सर्वार्थदर्शनम् ।
ऋग्यजुःसामरूपत्वात्त्रयीति परिकीर्तिता । कार्यसिद्धेन चतुर्धा
परिकीर्तिता । ऋचो यजूंषि सामानि अथर्वाङ्गिरसस्तथा ।
चातुर्होत्रप्रधानत्वाल्लिङ्गादित्रितयं त्रयी । अथर्वाङ्गिरसं
रूपं सामऋग्यजुरात्मकम् । ॥ २१-२३ ॥

उसी पर्वत पर सर्वार्थ को प्रकट करने वाला, तीन वेदों वाला आदि शास्त्र है। ऋग् (पद्य), यजु (गद्य), साम (गीति) रूप होने से उसे वेदत्रयी कहा जाता है। उसी वेदत्रयी को कार्य की सिद्धि के लिए चार नामों से कहा जाता है, (उनके नाम हैं-) ऋग् , यजु, साम और अथर्व। चारों यज्ञ प्रधान (होने पर भी) अपने स्वरूप के आधार पर उन वेदों की गणना तीन ही होती है; किन्तु चौथा अथर्वाङ्गिरस वेद साम, यजुषु एवं ऋक का ही स्वरूप है ॥ २१-२३ ॥

तथा दिशन्त्याभिचारसामान्येन पृथक्पृथक् ।
एकविंशतिशाखायामृग्वेदः परिकीर्तितः । शतं च नवशाखासु
यजुषामेव जन्मनाम् । साम्नः सहस्रशाखाः स्युः पञ्चशाखा अथर्वणः ।
वैखानसमतस्तस्मिन्नादौ प्रत्यक्षदर्शनम् । स्मर्यते
मुनिभिर्नित्यं वैखानसमतः परम् । कल्पो व्याकरणं शिक्षा
निरुक्तं ज्योतिषं छन्द एतानि षडङ्गानि ॥
उपाङ्गमयनं चैव मीमांसान्यायविस्तरः ।

धर्मज्ञसेवितार्थं च वेदवेदोऽधिकं तथा ।
निबन्धाः सर्वशाखा च समयाचारसङ्गतिः ।
धर्मशास्त्रं महर्षिणामन्तःकरणसम्भृतम् ।
इतिहासपुराणाख्यमुपाङ्गं च प्रकीर्तितम् ।
वास्तुवेदो धनुर्वेदो गान्धर्वश्च तथा मुने ।
आयुर्वेदश्च पञ्चैते उपवेदाः प्रकीर्तिताः ।
दण्डो नीतिश्च वार्ता च विद्या वायुजयः परः ।
एकविंशतिभेदोऽयं स्वप्रकाशः प्रकीर्तितः । ॥२४-३१ ॥

आभिचारिक क्रियाओं (विशिष्ट क्रियाओं) के आधार पर (चारों का) पृथक्-पृथक निर्देश किया जाता है। इक्कीस शाखाएँ ऋग्वेद की,एक सौ नौ शाखाएँ यजुर्वेद की, एक हजार शाखाएँ सामवेद की एवं अथर्ववेद की पाँच शाखाएँ कही गई हैं। वेदों में प्रथम वैखानस मत को प्रत्यक्ष दर्शन माना गया है। ऋषिगण इसलिए परम वैखानस(श्रीराम)का स्मरण करते हैं। ऋषियों ने वेदों को कल्प, व्याकरण, शिक्षा, निरुक्त, ज्योतिष एवं छन्द इन छः अंगों वाला एवं अयन(वेदान्त),मीमांसा और न्याय का विस्तार इन तीनों उपांगों वाला कहा है। धर्मज्ञ पुरुष वेदों के साथ उसके अंग एवं उपांगों का अध्ययन श्रेष्ठ मानते हैं। समस्त वैदिक शाखाओं के अन्तर्गत समयसमय पर मानवी आचरण को शास्त्र सम्मत बनाने के लिए निबन्ध रचे गये हैं। ऋषियों ने धर्मशास्त्रों(स्मृतियों)को अपने दिव्य ज्ञान से परिपूर्ण किया है। ऋषियों के द्वारा इतिहास-पुराण, वास्तुवेद, धनुर्वेद,गांधर्ववेद एवं आयुर्वेद, इन पाँच उपवेदों को प्रकट किया गया है। इसके साथ ही व्यापार,दण्ड,नीति, विद्या एवं प्राणजय,

(योगसिद्धि)करकें परमतत्त्व में स्थिति आदि इक्कीस भेद यह स्वयं प्रकाशित शास्त्र हैं ॥२४-३१ ॥

वैखानसऋषेः पूर्वं विष्णोर्वाणी समुद्भवेत् ।
त्रयीरूपेण सङ्कल्प्य वैखानसऋषेः पुरा ।
उदितो यादृशः पूर्वं तादृशं शृणु मेऽखिलम् ।
शश्वद्ब्रह्ममयं रूपं क्रियाशक्तिरुदाहृता ।
साक्षाच्छक्तिर्भगवतः स्मरणमात्ररूपाविर्भाव-
प्रादुर्भावात्मिका निग्रहानुग्रहरूपा भगवत्सहचारिणी
अनपायिनी अनवरतसहाश्रयिणी उदितानुदिताकारा
निमेषोन्मेषसृष्टिस्थितिसंहारतिरोधानानुग्रहादि-
सर्वशक्तिसामर्थ्यात्साक्षाच्छक्तिरिति गीयते । ॥ ३२-३४॥

प्राचीन काल में भगवान् विष्णु की वाणी वेदत्रयी रूप में वैखानस ऋषि के हृदय में प्रकट हुई। भगवान् की उस वाणी को वैखानस ऋषि ने संकल्प करके संख्या रूप में जिस प्रकार व्यक्त किया वह सब मुझसे सुनोवह सनातन ब्रह्ममय रूपधारिणी क्रियाशक्ति ही भगवान् की साक्षात् शक्ति है। वे आद्याशक्ति भगवती सीता भगवान् के संकल्प मात्र से संसार के विभिन्न रूपों को व्यक्त करती हैं और समस्त दृश्य जगत् के रूप में स्वयं व्यक्त होती हैं। वे कृपास्वरूपा एवं अनुशासनमयी, शान्ति तथा तेजोरूपा, व्यक्त-अव्यक्त कारण, चरण, समस्त अवयव, मुख, वर्ण भेद-अभेद रूपा; भगवान् के संकल्प का अनुगमन करने वाली श्री सीताजी भगवान् से अभिन्न, अविनाशिनी, उनके आश्रित रहने वाली, कथनीय और रूप धारण करने वाली अकथनीय, निमेषउन्मेष सहित उत्पत्ति-पालन एवं

संहार, तिरोधान करने वाली, अपनी कृपा बरसाने वाली और समस्त सामर्थ्य धारण करने वाली होने के कारण साक्षात् शक्ति स्वरूपा कही गई हैं ॥ ३२-३४॥

इच्छाशक्तिस्त्रिविधा प्रलयावस्थायां विश्रमणार्थं
भगवतो दक्षिणवक्षःस्थले श्रीवत्साकृतिर्भूत्वा
विश्राम्यतीति सा योगशक्तिः । ॥ ३५ ॥

श्रीसीताजी त्रिविध इच्छाशक्तिरूपा हैं। वे ही योगमाया के रूप में प्रलय काल होने पर विश्राम हेतु श्री भगवान् के दक्षिण वक्ष पर स्थित श्रीवत्स का रूप धारण करके विश्राम करती हैं ॥ ३५ ॥

भोगशक्तिर्भोगरूपा
कल्पवृक्षकामधेनुचिन्तामणिशङ्खपद्मनिध्यादिनवनिधिसमाश्रिता
भगवदुपासकानां कामनया अकामनया वा भक्तियुक्ता नरं
नित्यनैमित्तिककर्मभिरग्निहोत्रादिभिर्वा यमनियमासन
प्राणायामप्रत्याहारध्यानधारणासमाधिभि-
र्वालमणन्वपि गोपुरप्राकारादिभिर्विमानादिभिः सह
भगवद्विग्रहार्चापूजोपकरणैरर्चनैः स्नानाधिपर्वा
पितृपूजादिभिरन्नपानादिभिर्वा भगवत्प्रीत्यर्थमुक्त्वा
सर्वं क्रियते । ॥ ३६॥

वे ही भोग करने की शक्ति धारण किये हुए साक्षात् भोगरूपा हैं। श्री सीताजी ही कल्पवृक्ष, कामधेनु, चिन्तामणि, शंख, पद्म (महापद्म, मकर, कच्छप) आदि नौ निधि स्वरूपा हैं। जो भगवद् भक्त भगवान् की नित्य-नैमित्तिक कर्म के द्वारा यज्ञ आदि यम, नियम, आसन, प्राणायाम, प्रत्याहार, धारणा, ध्यान, समाधि आदि के द्वारा उपासना करते हैं; उनकी इच्छा अथवा अनिच्छा पर भी उनके उपभोग के लिए वे विभिन्न प्रकार के भोज्यपदार्थ प्रदान करती हैं। भगवती सीताजी ही भगवान् के श्रीविग्रह की पूजा-अर्चादि की सामग्रियों के रूप में, पितृपूजा आदि के रूप में, तीर्थ स्नानादि के रूप में, अन्न एवं रस आदि के रूप में भगवान् को प्रसन्न करने के लिए सबका सम्पादन करती हैं ॥ ३६॥

अथातो वीरशक्तिश्चतुर्भुजाऽभयवरदपद्मधरा किरीटाभरणयुता
सर्वदेवैः परिवृता कल्पतरुमूले चतुर्भिर्गजै रत्नघटैरमृतजलै-
रभिषिच्यमाना सर्वदैवतैर्ब्रह्मादिभिर्वन्द्यमाना
अणिमाद्यष्टैश्वर्ययुता संमुखे कामधेनुना स्तूयमाना वेदशास्त्रादिभिः
स्तूयमाना जयाद्यप्सरस्स्त्रीभिः परिचर्यमाणा आदित्यसोमाभ्यां
दीपाभ्यां प्रकाश्यमाना तुम्बुरुनारदादिभिर्गायमाना
राकासिनीवालीभ्यां छत्रेण ह्लादिनीमायाभ्यां चामरेण
स्वाहास्वधाभ्यां व्यजनेन भृगुपुणादिभिरभ्यर्च्यमाना
देवी दिव्यसिंहासने पद्मासनरूढा सकलकारणकार्यकरी
लक्ष्मीर्देवस्य पृथग्भवनकल्पना। अलंचकार स्थिरा
प्रसन्नलोचना सर्वदेवतैः पूज्यमाना वीरलक्ष्मीरिति
विज्ञायत इत्युपनिषत् ॥ ॥ ३७॥

वीरशक्तिरूपा श्री सीताजी की चार भुजाओं में अभय, वर एवं कमल शोभायमान हैं। वे किरीटादि समस्त अलंकारों से सुशोभित हैं। कल्पवृक्ष के मूल में चार हाथियों के द्वारा स्वर्ण कलशों द्वारा वे अभिषिंचित हो रही हैं। सभी देवता उन्हें घेर कर खड़े हैं एवं ब्रह्मादि देवता उनका गुणगान कर रहे हैं। अणिमादि अष्ट सिद्धियों से युक्त कामधेनु द्वारा वंदित श्री सीता जी की अप्सराएँ और देवांगनाएँ सेवा कर रही हैं। देवतुल्य वेदशास्त्र उनकी स्तुति करते हैं। दीपक के रूप में सूर्य-चन्द्रमा वहाँ अपना प्रकाश फैला रहे हैं। नारद और तुम्बरु आदि ऋषि उनका गुणगान कर रहे हैं। राका और सिनीवाली देवियाँ छत्र लिए खड़ी हैं। स्वाहा और स्वधा के द्वारा पंखे से हवा की जा रही है। ह्लादिनी और मायाशक्तियाँ चँवर डुला रही हैं। महर्षि भृगु और पुण्य आदि ऋषि उनका अर्चन-वन्दन कर रहे हैं। समस्त कारणों एवं कार्यों को करने वाली महालक्ष्मीरूपा भगवती सीता जी अष्टदलकमल पर स्थित दिव्य सिंहासन पर विद्यमान हैं। वे दिव्य अलंकारों से अलंकृत हैं। प्रसन्न नेत्रों वाली देवताओं के द्वारा पूजित हुई उन वीरलक्ष्मीरूपा महादेवी (सीता देवी) को विशेष रूप से (तत्त्वज्ञानपर्वक) जानना चाहिए। यही उपनिषद् (रहस्य विद्या) है ॥ ३७॥

॥हरिः ॐ तत्सत् ॥

शान्तिपाठ

ॐ भद्रं कर्णेभिः शृणुयाम देवा भद्रं पश्येमाक्षभिर्यजत्राः ।
स्थिरैरङ्गैस्तुष्टुवाꣳसस्तनूभिर्व्यशेम देवहितं यदायुः ॥

गुरुके यहाँ अध्ययन करने वाले शिष्य अपने गुरु, सहपाठी तथा मानवमात्र का कल्याण-चिन्तन करते हुए देवताओं से प्रार्थना करते है कि:

हे देवगण ! हम भगवान का आराधन करते हुए कानों से कल्याणमय वचन सुनें। नेत्रों से कल्याण ही देखें। सुदृढः अंगों एवं शरीर से भगवान की स्तुति करते हुए हमलोग; जो आयु आराध्य देव परमात्मा के काम आ सके, उसका उपभोग करें।

स्वस्ति न इन्द्रो वृद्धश्रवाः स्वस्ति नः पूषा विश्ववेदाः ।
स्वस्ति नस्ताक्ष्यो अरिष्टनेमिः स्वस्ति नो बृहस्पतिर्दधातु ॥

जिनका सुयश सभी ओर फैला हुआ है, वह इन्द्रदेव हमारे लिए कल्याण की पुष्टि करें, सम्पूर्ण विश्व का ज्ञान रखने वाले पूषा हमारे लिए कल्याण की पुष्टि करें, हमारे जीवन से अरिष्टों को मिटाने के लिए चक्र सदृश्य, शक्तिशाली गरुड़देव हमारे लिए कल्याण की पुष्टि

करें तथा बुद्धि के स्वामी बृहस्पति भी हमारे लिए कल्याण की पुष्टि करें।

॥ ॐ शान्तिः शान्तिः शान्तिः ॥

भगवान् शांति स्वरुप हैं अत: वह मेरे अधिभौतिक, अधिदैविक और अध्यात्मिक तीनो प्रकार के विघ्नों को सर्वथा शान्त करें ।

॥ हरिः ॐ तत्सत् ॥

॥ इति सीतोपनिषत्समाप्ता ॥

॥ सीता उपनिषद समात ॥

संकलनकर्ता:

श्री मनीष त्यागी

संस्थापक एवं अध्यक्ष
श्री हिंदू धर्म वैदिक एजुकेशन फाउंडेशन

www.shdvef.com

॥ ॐ नमो भगवते वासुदेवाय: ॥